पंचायती राज : लोकतंत्र, विकास एवं सशक्तीकरण का वाहक

डॉ0 जितेन्द्र कुमार पाण्डेय
सहायक प्रोफेसर,
श्रीमती इन्दिरा गाँधी राजकीय पी0जी0 कॉलेज,
लालगंज, मीरजापुर

पंचायती राज : अर्थ, उत्पत्ति एवं प्रासंगिकता

भारतीय लोकतांत्रिक संरचना में शासन के तीन स्तर हैं–राष्ट्रीय स्तर पर संघीय सरकार, राज्य स्तर पर राज्य या प्रादेशिक सरकारें और स्थानीय स्तर पर पंचायती राज एवं नगरपालिका प्रणाली। पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम, तहसील और जिले आते हैं। पंचायती राज संस्थाएँ स्थानीय जनता तथा राज्य शासन के बीच विचारों और भावनाओं के सम्प्रेषण का महत्वपूर्ण माध्यम है एवं स्थानीय समुदाय के बुनियादी ईकाई के रूप में है।[1] लोकतांत्रिक व्यवस्था को सशक्त बनाने के लिए पंचायती राज बहुत आवश्यक हैं, इसके कई कारण है। इससे सार्वजनिक जीवन में निर्णय प्रक्रिया में भाग लेने के अवसर बढ़ जाते हैं। और भाग लेने वालों की संख्या में बढ़ोतरी होती है। यह स्थानीय स्तर पर काम करता है। इसलिए स्थानीय आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के प्रति राष्ट्रीय शासन के मुकाबले अधिक संवेदनशील होता है। इस स्तर पर नीतियों की छोटे पैमाने पर परख की जाती है। यदि वो परख सफल हो जाता है तो उसका अनुकरण राष्ट्रीय स्तर पर भी किया जा सकता है। इसके कारण सत्ता केन्द्रीय शासन के हाथों में केन्द्रित नहीं हो पाती है। इस प्रकार स्थानीय शासन सत्ता के संवैधानिक बँटवारे को भौगोलिक पक्ष बन जाता है।[2]

लोकतंत्र का वास्तविक अर्थ सार्वजनिक निर्णयों पर सार्वजनिक नियंत्रण और नियंत्रण को लागू करने में अधिकारों की समानता से है। इसके साथ–साथ जनता की समस्याओं एवं उसके समाधान की प्रक्रिया में जनता की पूर्ण तथा प्रत्यक्ष भागीदारी से भी है। इसलिए लोकतंत्र का वास्तविक रूप स्थानीय स्तर पर ही परिलक्षित होगा। जैसा कि लार्ड ब्राइस ने कहा – ''लोकतंत्र की सर्वश्रेष्ठ पाठशाला उसकी सफलता की सबसे अधिक गारण्टी स्वायत्त शासन के संचालन में ही निहित है।''

भारत जैसे विशाल आबादी, क्षेत्रीय विभिन्नता एवं सांस्कृतिक विविधता वाले देश में लोकतंत्र को सार्थक, कल्याणोन्मुख बनाने एवं 'समावेशी विकास' सुनिश्चित करने हेतु विकेन्द्रीकरण अंतर्निहित अनिवार्यता है। इसलिए उच्च स्तर से निम्न स्तर की ओर शक्ति का स्थानांतरण लोकतांत्रिक प्रक्रिया का मर्म है। प्रसिद्ध अंग्रेज विचारक डी0 टॉकवीले ने कहा – ''एक राष्ट्र भले ही स्वतन्त्र सरकार की स्थापना कर ले परन्तु स्थानीय संस्थाओं के बिना इसमें स्वतंत्रता की भावना नहीं आ सकती।'' भारत में प्राचीन काल से ही पंचायतों का अस्तित्व रहा है। गाँव प्रशासन की धुरी एवं आत्मनिर्भर समुदाय थे।[3]

मुगल काल में भी पंचायतों का अस्तित्व एवं उपयोगिता बनी रही। मुगलों ने न केवल ग्राम सरकार की प्राचीन काल से चली आ रही अवधारणा को बनाये रखा बल्कि गाँवों को उन्होने राजस्व एवं कानून व्यवस्था की ईकाई के रूप में अपने प्रशासनिक व्यवस्था में सम्मिलित किया। गाँव का प्रधान जिसे मुगलकाल में मुकद्दम के नाम से जाना जाता था। वह गाँव के स्तर की कानून व्यवस्था के लिए उत्तरदायी माना जाता था। अकबर के समय में मुकद्दम मुगल प्रशासन एवं गाँव के बीच की कड़ी का काम करता था। प्रशासन गाँव के किसानों की समस्याओं को मुकदमा या मुखिया के माध्यम से देखती थी।[4]

जब ब्रिटिश भारत में आये उस समय भी पंचायत व्यवस्था काफी मजबूत और सशक्त रूप में कार्य कर रही थी। किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के लम्बे शासन काल में पंचायतों पर ध्यान नही दिया गया।

स्वतंत्रता के बाद संविधान निर्माण के समय इसकी पूर्णतः अनदेखी की गई।

दुनिया के सबसे बड़े संवैधानिक दस्तावेज होने के बाद भी संविधान में राजनीतिक संगठन के रूप में पंचायती राज संस्थाओं के बारे में चर्चा नहीं हुई, न ही संविधान सभा द्वारा प्रस्तुत मूल प्रलेख में इसका उल्लेख था। इसे बाद में गांधीवादी विचार को स्थान देने के लिए जोड़ा गया।

संविधान सभा में पंचायती राज व्यवस्था को संविधान में शामिल करने पर गंभीर मतभेद थे। महात्मा गांधी एवं राजेन्द्र प्रसाद ने विकास के आरंभिक स्तर के रूप में गाँव की प्रमुखता की वकालत की तथा

औद्योगीकरण और शहरीकरण का विरोध किया। दूसरी ओर जवाहर लाल नेहरू, अबुल कलाम आजाद और डॉ0 भीमराव अम्बेडकर जैसे राजनेता पंचायती राज व्यवस्था के घोर आलोचक थे। संविधान का प्रारूप प्रस्तुत करते हुए अम्बेडकर ने कहा – ''ये ग्राम गणतंत्र भारत के विध्वंस और अद्यः पतन के कारक है, ये गाँव, गाँव नहीं बल्कि स्थानीय स्वार्थ के केन्द्र है। मुझे प्रसन्नता है कि संविधान के प्रारूप गाँव को बहिष्कृत कर दिया है और व्यक्ति को इसकी ईकाई माना है।'' नेहरू की भी मान्यता थी कि गाँव इतने पिछडे हुए थे कि उन्हे आधुनिक भारत के निर्माण में बराबर हिस्सेदार नहीं बनाया जा सकता था। वास्तव में न केवल गाँवों के बारे में बल्कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की संरचना और उसके आधार के बारे में भी नेहरू एवं गाँधी में गंभीर मतभेद थे। जहाँ गाँधी गाँवों को भारतीय व्यवस्था की धुरी बनाना चाहते थे वहीं नेहरू एक शक्तिशाली केन्द्र सरकार के माध्यम से एक आधुनिक मजबूत राज्य व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें पहल केन्द्र सरकार के द्वारा होनी थी। परन्तु बाद में गांधीवाद दृष्टिकोण के प्रति उदारता दिखाते हुए भारत में पंचायत को स्थानीय शासन का आधार स्वीकार करते हुए संविधान सभा में इसे राज्य के नीति निर्देशक सिद्वान्तों के अन्तर्गत अनुच्छेद 40 के रूप में सम्मिलित कर लिया गया जिसमें कहा गया है कि ''राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हे स्वायत्तशासी शासन की इकाईयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक हो।''

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय एकीकरण, क्षेत्रीय विषमता की समाप्ति, समतामूलक विकास सुनिश्चित करने हेतु नियोजन को माध्यम बनाया गया। इसके लिए योजना आयोग की स्थापना की गई। तथा राष्ट्र पुनर्निर्माण में जनता का सहयोग और भागीदारी प्राप्त करने के लिए पंचायती राज की आवश्यकता महसूस की गई। कृषि की जड़ता, गरीबी आर्थिक विकास की धीमी गति जैसी तात्कालिक चुनौतियों के निराकरण हेतु ''सामुदायिक विकास कार्यक्रम'' को लागू किया गया जिसके फलस्वरूप फिर भविष्य में राजनीति संगठनों के रूप में पंचायती राज संस्थाओं की स्थापना पर जोर देने की शुरूआत हुई।

इन चुनौतियों से नेहरू के दृष्टिकोण में बदलाव आया। वे अब पंचायतों को सशक्त बनाने के समर्थक हो गए, बाद में उन्होने कहा कि ''भारत गरीब है क्योंकि भारत के गाँव गरीब हैं अगर गाँव अमीर होंगे, तो भारत अमीर हो जायेगा अगर हम ग्रामवासियों को उनके अपने गाँव में सही अर्थ में स्वराज देना चाहते हैं, तो पंचायतों को अधिक अधिकार दिए जाने चाहिए।''

पंचायतों को अधिक कारगर बनाए जाने का एक अन्य कारण यह था कि संसदीय संस्थाएँ भारतीय लोकतंत्र को व्यापक आधार दे पाने में असफल रही थी, इललिए कालान्तर में यह सोचा गया कि क्यों न गाँव अपना शासन स्वयं चलाएँ। इसी के अनुपालन में ग्रामीण भारत के समग्र विकास के लिए 1952 में 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' एवं 1953 में 'राष्ट्रीय विस्तार सेवा' की स्थापना की गई। किन्तु नौकरशाही के प्रभुत्व एवं जनता की भागीदारी के अभाव में यह प्रयोग असफल रहा। विफलता के बाद 1957 में 'बलवंत राय मेहता' समिति के रिपोर्ट में पंचायतों को लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत शासन की संस्थाएं बनाने की बात कही गई, लेकिन समिति ने पंचायतों को ग्रामीण विकास का साधन मात्र समझा। इसके 21 वर्ष बाद 1977 अशोक मेहता समिति ने पंचायतों को राजनैतिक संस्थाओं का रूप देने की सिफारिश की क्योंकि वह इस सोच से परिचालित थी कि कुल मिलाकर योजना व विकास राजनैतिक प्रक्रिया का ही एक अंग है। 1986 में एल0 एम0 सिंघवी समिति ने पंचायतों को संवैधानिक संरक्षण देने की बात कही जिसे सरकार ने मान लिया।

पंचायतों को अधिक सशक्त एवं अधिकार सम्पन्न बनाने का सबसे भागीरथ प्रयास राजीव गाँधी ने किया। वे अन्य नेताओं की तुलना में गाँवों की दुर्दशा को बेहतर समझते थे, इसलिए उन्होने संविधान में संसोधन कर पंचायती राज को एक निश्चित दिशा देने की कोशिश की। उन्होने कहा ''भारत के लोगों को हमें अधिकतम लोकतंत्र और सत्ता का अधिकतम हस्तानांतरण सुनिश्चित कराना है। सत्ता की दलाली समाप्त करने और लोगों को अधिकार देने की आवष्यकता है।'' इसी प्रतिबद्धता को मूर्त रूप देने के लिए 1989 में सरकार ने 64 वाँ संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। यह विधेयक लोक सभा में पारित हो गया किन्तु राज्यसभा में पारित न हो पाने के कारण यह अधिनियम नहीं बन सका।[8]

बाद में 1992 में नरसिंह राव सरकार ने 73 वें संविधान संसोधन अधिनियम के जरिए पंचायतों को संवैधानिक दर्जा दिया गया एवं संविधान में पंचायतों से संबधित एक नया अध्याय ;प्द्ध सम्मिलित किया गया। 'द पंचायत' नाम से उल्लिखित इस अधिनियम के अन्तर्गत 243क–ञ तक अनुच्छेद तथा एक नयी ग्यारहवीं अनुसूची जोड़ी गई। जिसमें निम्नलिखित प्रावधान है –

- ग्राम सभा या ग्रामीण सभा का गठन।

- ग्राम, मध्यवर्ती और जिला स्तर पर (उन राज्यों को छोड़कर जहाँ की जनसंख्या 20 लाख से कम है वहां टू–टीयर पंचायते हैं) थ्री टीयर पंचायती राज ढांचा।
- पंचायतों के लिए पांच साल का कार्यकाल और राज्य चुनाव आयोग की देखरेख और नियंत्रण में उनके चुनाव कराना।
- महिलाओं के लिए एक–तिहाई आरक्षण और अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए जनसंख्या में उनके अनुपात के अनुसार आरक्षण।
- राज्य और पंचायतों के बीच संशाधनों के वितरण की सिफारिशों के लिए राज्य वित्त आयोग का गठन।
- जिले आदि में ग्रामीण और षहरी सरकारी योजनाओं को सम्मिलित करने के लिए योजना समितियाँ (डीसीपी) का गठन।

पंचायती राज प्रणाली के विकास और सुदृढ़ीकरण में राज्य अहम भूमिका निभाते हैं। उन पर निम्नलिखित के बारे में कानून लाने का दायित्व है :

- पंचायतों का संयोजन
- पंचायतों का कर निर्धारित करने का अधिकार और पंचायतों की वित्तीय सहायता के लिए अनुदान सहायता उपलब्ध कराना
- पंचायतों के कार्य, पदाधिकारी और धनराशि का हस्तांतरण
- लेखों का रखरखाव और लेखा परीक्षा।

संविधान 11वीं योजना में 29 विषयों को सूचीबद्ध करता है, जिन्हें पंचायतों को हस्तांतरित करने का सुझाव दिया गया है। इन विषयों में कृषि, ग्रामीण आवास, पेयजल, सड़कें, महिला और बाल विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य और गरीबी उन्मूलन आदि शामिल है।

पंचायतों को निश्चितता, निरन्तरता व सशक्त बनाने में इस अधिनियम का विशेष महत्व है क्योंकि यह (क) राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन पर आधारित है तथा (ख) महिलाओं के लिए संस्थागत प्रतिनिधित्व का प्रावधान करता है।[9]

राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन का माध्यम बनी पंचायती राज व्यवस्था जिसमें पंचायतों को संवैधानिक मान्यता दी गई, उनका कार्य क्षेत्र परिभाषित किया गया था उन्हे संसाधनों की मान्यता दी गई तथा उनके स्त्रोत निश्चित किए गए। इस प्रकार से संस्थाएं भारतीय राज्य का तीसरा संस्तर कही जाने लगी है, तथा नागरिक समाज एवं सरकार के बीच कड़ी का काम करने लगी।

पंचायती राज : लोकतंत्र, विकास एवं सशक्तीकरण के वाहक के रूप में

भारत में पंचायती राज व्यवस्था की रचना प्राचीन एथेंस के प्रत्यक्ष लोकतंत्र की तर्ज पर की गई है। प्राचीन भारत में भी ऐसा प्रत्यक्ष लोकतंत्र था। जैसा कि आल्टेकर ने कहा ''अत्यंत प्राचीन काल से ही भारत के गाँव प्रशासन की धुरी रहे हैं।'' चार्ल्स मेटकॉफ ने ग्राम पंचायतों को ''छोटे–छोटे गणराज्य'' की संज्ञा दी है। स्वतंत्र भारत में पंचायती राज सिद्वान्त के लिए पंच परमेश्वर की प्राचीन परम्परा से प्रेरणा ग्रहण की गई है। इसके पीछे स्थानीय स्वशासन का यह उसूल काम कर रहा है कि सरकार की निचली इकाईयों को सत्ता का अधिकतम हस्तानांतरण हो तथा लोकप्रिय निर्वाचन से गठित स्थानीय संस्थाओं के जरिए स्वशासन हो। यह उसूल चार मान्य बुनियादी धारणाओं पर आधारित है : राजनीति में प्रत्येक वर्ग की जनता की भागीदारी, आर्थिक विकास के लिए संसाधनों को जुटाना, लोकतंत्र में बुनियादी संरचनाओं को समावेश और राष्ट्रीय एकता को सुनिश्चित करना।[10]

हमारे देश की बहुमुखी और विविधतापूर्ण नागरिक समाज की गतिविधियों के फैलाव को देखते हुए लोकतंत्रीय व्यवस्था को सुदृढ़ एवं उसके क्षेत्र को व्यापक करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से पंचायत व्यवस्था का प्रवेश हमारे लोकतंत्र के विकास में मील का पत्थर साबित हुआ है क्योंकि इसमें लोकतंत्रीय व्यवस्था बुनियादी स्तर पर पहुँच गयी है। भारतीय लोकतंत्र की दृष्टि से यह एक गणात्मक परिवर्तन है। इसमें हमारे लोकतंत्र को चिरस्थायी आधार मिला है। इस विशाल देश के कोने–कोने में फैले हुए सभी गाँव का लोकतंत्रीय नागरिक समाज के संचालन में भागीदार हुए हैं, तथा सार्वजनिक जीवन में निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने के अवसर भी बढ़ गए हैं। चूंकि यह स्थानीय स्तर पर कार्य करता है इसलिए स्थानीय आवश्यकताओं तथा परिस्थितियों के प्रति राष्ट्रीय शासन की अपेक्षा यह अधिक संवेदनशील होता है। राजनेता राष्ट्रीय स्तर के पद पर पहुँचने के लिए इससे शुरूआत कर सकते हैं तथा उनको राजनीति शिक्षण प्राप्त हो सकता है।[11]

इस प्रकार स्थानीय शासन सत्ता के संवैधानिक बंटवारे का भौगोलिक पक्ष बन गया है। इससे देश के संघीय लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक नए युग का सूत्रपात

हुआ है, यह प्रतिनिधि लोकतंत्र को भागीदारीयुक्त लोकतंत्र में ;श्तवउ त्मचतमेमदजंजपअम क्मउवबतंबल जव च्तजपबपचंजवतल क्मउवबतंबलद्ध यमें रूपान्तरित करने में सहायक साबित हुआ है। इन स्वायत्त संस्थाओं के सृजन से भारतीय संघवाद भी अधिक गहन हुआ है।

पंचायती राज का महत्व इसलिए भी है कि प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर एवं स्वशासी लोकतंत्र बनाने का जो स्वप्न राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने देखा था, उसे ग्रामीण पुनरोद्वार में जन–सामान्य को भागीदार बनाने की प्रक्रिया से साकार करने का प्रयास किया गया है। आज ग्रामीण भारत के सशक्तीकरण की दिशा में पंचायती राज खासकर ग्राम सभा का ऐतिहासिक महत्व है।[12] ग्राम सभा स्थानीय स्व–शासन और ग्राम पंचायत के पारदर्शक एवं उत्तरदायी कामकाज का केन्द्र है। ये ऐसा मंच है जो प्रत्यक्ष एवं सहभोगी लोकतंत्र सुनिश्चित करती है। यह सभी नागरिकों के लिए समान अवसर प्रदान करती है।

ग्राम सभा ग्राम स्तर पर कानून के अनुसार, किसी राज्य की विधायिका जैसे अधिकारों का उपयोग और उसके समान काम कर सकती है।

अब यह साबित हो चुका है कि ग्रामसभा की सशक्त व्यवस्था अच्छे प्रशासन का अपरिहार्य आधार है और इसलिए मंत्रालय ग्रामसभा का कामकाज ज्यादा कारगर और परिणामोन्मुखी बनाने के गंभीर प्रयास कर रहा है। पेयजल, साफ–सफाई, महिलाओं से संबंधित मामले, प्राथमिक शिक्षा, पोशण, टीकाकरण, कृषि, मृदा संरक्षण, पानी, वन, राज्य और केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के लिए लाभार्थियों का चयन, सामाजिक लेखा परीक्षा, पानी, वन, राज्य और केन्द्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के लिए लाभार्थियों का चयन, सामाजिक लेखा परीक्षा, खाद्य सुरक्षा और ग्राम आपदा योजनाएं कुछ ऐसे महत्वपूर्ण मामले हैं जिन पर ग्रामसभा में विचार विमर्श किया गया है।

ग्राम सभा में महिलाओं की उपस्थिति और भागीदारी बढ़ाने के लिए राज्यों को महिलाओं के अलग कोरम की सलाह भी दी गयी है। इसके अलावा महिला सभा का आयोजन आवष्यक समझा जाता है, क्योंकि महिला सभा की बैठक में महिलाओं की उपस्थिति और भागीदारी ग्रामसभा की बैठक से कहीं ज्यादा बेहतर होती है। दूसरा, महिला सभा की बैठक में दहेज, घरेलू हिंसा, दुर्व्यवहार, सार्वजनिक जगह पर हिंसा, कन्या भ्रूण हत्याओं और महिलाओं और बच्चों की तस्करी ज्यादा संवेदनशील मामले उठाये जा सकते हैं।

24 अप्रैल, 2013 को राष्ट्रीय पंचायतीराज दिवस के अवसर पर आयोजित समारोह में भाग लेने वाले राज्यों के बहुत से प्रतिनिधियों ने ग्राम सभाओं के कामकाज में और सुधार लाने के बारे में कई टिप्पणियां की है। उनमें से निम्नलिखित तीन सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है :

ग्रामसभा की बैठक मे लिये गये फैसले का कार्यान्वयन सावधानी से किया जाना चाहिए और यदि उसका कार्यान्यवन नहीं हो, तो अगली बैठक में उसका कारण स्पष्ट रूप से बताया जाना चाहिए और यह भी अवष्य सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि उस फैसले को सभी संबंद्ध पक्ष बिना किसी कोताही के कार्यान्वित करें।

ग्राम पंचायत योजना में ग्राम सभा द्वारा चिन्हित प्राथमिकताओं को ब्लॉक पंचायतों, जिला पंचायतों और अधिकारियों द्वारा कमजोर और/या नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए।

ग्रामसभा की बैठक बुलाने के लिए कोरम निश्चित होना चाहिए और ग्रामसभा में महिला सदस्यों को कोरम भी निर्धारित होना चाहिए और राज्य सरकारों को अपने निर्देशों/नियमों आदि में इसका प्रावधान करना चाहिए।

हमारे देश की 70: जनसंख्या गाँवों में रहती है इस लिहाज से पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण भारत का विस्तार व लोगों का सशक्तीकरण, एक न्यायपूर्ण व सम–समाज की स्थापना के लिए पूर्व षर्त है। राजनीतिक सशक्तिकरण के माध्यम से सामाजिक सशक्तिकरण लाने का प्रयास किया जा रहा है। यह प्रयोग उसी प्रकार का है जिस प्रकार स्वतंत्रता के बाद राजनीतिक समानता के सिद्वान्त ने सामाजिक असमानता की दीवारों को कमजोर किया।

वर्तमान में ग्रामीण भारत के विकास के सहायतार्थ चलायी जा रही अनेक विकासात्मक योजनाओं का क्रियान्वयन पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से किया जा रहा हैं इनमें महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारण्टी योजना, भारत निर्माण, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, राजीव गांधी विद्युतीकरण योजना तथा हरियाली योजना प्रमुख है।[13]

इन विकासात्मक योजनाओं की देन है कि आज एक सशक्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था का उद्भव हो सका है जो ग्रामीण आबादी के सशक्ति करण के साथ–साथ समतामूलक विकास के लिए भी महत्वपूर्ण है। वर्तमान विश्वव्यापी आर्थिक मंदी से भारत बहुत अधिक प्रभावित नहीं हुआ तो इसका एक प्रमुख कारण एक सशक्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मौजूद होना ही है।

महिला सशक्तिकरण की दृष्टि से भीं पंचायती राज दूरगामी महत्व का साबित हुआ है, कई अध्येता, जैसे

निर्मल मुखर्जी, जॉर्ज मैथ्यू और रजनी कोठारी इसे क्रान्ति का नाम देते हैं। क्योंकि इसका दायरा बहुत ही व्यापक है। महिला अधिकारिता के पूर्ववर्ती प्रयास व्यक्तिगत निर्णय तथा माहौल में परिवर्तन तक सीमित थे।

सामाजिक ढाँचे में कोई ऐसा परिवर्तन नहीं किया गया, जिससे महिलाओं की हैसियत में संरचनात्मक सुधार हो। इसके विपरीत 1992 के 73 वें संशोधन अधिनियम में जो प्रयोग हुए वह महिलाओं के लिए 'संस्थागत प्रतिनिधित्व' का प्रावधान करता है।

पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उनकी स्थिति में व्यापक बदलाव आया है। पंचायतों के द्वारा महिलाओं को प्राप्त राजनीतिक सशक्तिकरण की देन है कि लगभग 20 वर्शों में देश के भीतर राजनीतिक विमर्श में महिलाओं को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है, देश भर में 15 लाख पंचायत प्रतिनिधि में लगभग 38: महिलाएँ हैं।[14]

यह संख्या विश्व में कुल निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों से भी अधिक है जबकि आरक्षण से पहले निर्वाचित महिलाओं की संख्या मात्र 4.5 फीसदी थी। कुल राज्यों में जैसे उत्तराखंड में 56:, बिहार में 54:, मध्य प्रदेश में 52:, महिलायें पंचायतों में चुनाव जीत की आती है।

यह बदलाव सिर्फ संख्यात्मक ही नहीं है बल्कि यह अन्तर गुणात्मक भी हैं। ये निर्वाचित महिला प्रतिनिधि ''नागरिक समाज'' ;ब्पअपस ैवबपमजलद्ध के राजकाज संबंधी अपने अनुभवों को राज्य के राज काज संचालन में भी ले आई हैं। इस प्रकार वे राज्य को गरीबी, गैर बराबरी व लैंगिग न्याय सरीखे मुद्दों के प्रति संवेदनशील बना रही है।

इन महिलाओं को राजनीति में लाने के लिए उठाया गया यह कदम 'सकरात्मक भेदभाव' कहा जा सकता है। पंचायती राज व्यवस्था ने महिलाओं के स्वयं के बारे में सोच बदलने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जैसा कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह पंचायत प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए कहा कि ''पंचायती राज की सबसे बड़ी सफलता यही है कि उसने महिलाओं का राजनैतिक व सामाजिक सशक्तिकरण किया है जो आधुनिक युग में विश्व इतिहास में एक अनोखी मिसाल है। पंचायतों में निर्वाचित महिलाएँ नेतृत्व गुण व नारीवाद सोच के जरिए राजकाज में बदलाव ला रही हैं। ये महिलाएँ, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, घरेलू हिंसा नशामुक्ति, उत्पीड़न और बुनियादी सुविधाओं के विकास सरीखे मुद्दों को प्राथमिकता देती हैं, क्योंकि उनकी आवश्यकताएँ उसी प्रकार की हैं।''

महत्वपूर्ण बात यह है कि गाँव की स्थानीय सभा में महिलाओं द्वारा उठाए गए मुद्दे 1995 में कोपेनहेगन में आयोजित सामाजिक शिखर सम्मेलन एवं संयुक्त राष्ट्र संघ मिलेनियम डेवलपमेंट गोल (2000) को विशय से जुड़े हुए हैं, जैसे गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा, बाल विकास, विकलांग कल्याण, वृद्ध कल्याण व महिला विकास। वे इन्हीं सामाजिक विशयों पर चर्चा करते हुए इस 'ग्लोबल थीम' को स्थानीय स्तर पर नीतियों व कार्यक्रमों में षामिल करने एवं रूपान्तरित करने में लगी हुई है।[15]

समस्याएँ, समाधान एवं सुझाव

शासन का विकेन्द्रीकरण, ग्रामीण भारत का विकास एवं महिलाओं के साथ–साथ कमजोर लोगों के सशक्तिकरण में सहायक होने के बाद भी पंचायती राज व्यवस्था उस मकसद से अभी दूर हैं जिसके लिए इसकी स्थापना की गई थी। स्थानीय स्वशासन का माध्यम बनने के बजाय यह राज सरकारों एवं सरकारी अफसरों की मोहताज सी हो गई। पंचायती राज के लगभग 18 वर्ष पूरे होने के अवसर पर देश भर से आये पंचायत प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा ''केन्द्र सरकार इन संस्थाओं को और सक्षम बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं।'' उन्होने राज्यों से यह अपील भी की कि वे पंचायतों को अधिक अधिकार एवं उत्तरदायित्व सौंपे क्योंकि यह उनका संवैधानिक दायित्व है। दरअसल पंचायतें जब तक सषक्त नहीं बनती, वे लोगों के सशक्तिकरण का माध्यम नहीं बन सकती है। पंचायतों को मजबूत करने का दायित्व राज्यों का है, जबकि अधिकतर राज्य इसके प्रति उपेक्षा का भाव रखते हैं, तथा इसे अपने अधिकारों में कटौती एवं हस्तक्षेप ही समझते हैं। हालांकि संघ का भी दृष्टिकोण विकेन्द्रीकरण का वाहक नहीं है। उनके लिए पंचायतों की मजबूती का अर्थ केन्द्रीय योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायत प्रतिनिधियों की भागीदारी बढ़ानी है, जो कि एक सीमित दृष्टिकोण है। आज अधिकतर पंचायतों के पास राजस्व का अपना कोई स्त्रोत नहीं है। न ही नीति निर्माण करने का प्रावधान है, न्याय प्रशासन एवं पुलिस प्रशासन के विकेन्द्रीकरण का सर्वथा अभाव है। इसलिए पंचायतों को वास्तविक रूप में सशक्त बनाना है तो उन्हें केन्द्रीय योजनाओं का उपकरण बनाने की बजाय स्वायत शासन का स्तंभ बनाना होगा। संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन सरकार द्वारा गठित ''द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग' ने अपनी छठी रिपोर्ट में पचायतों को लोकतंत्र के प्रोन्नयन तथा 'नागरिक केन्द्रित' बनाने का सुझाव दिया है। पंचायतों को सशक्त बनाने हेतु आयोग ने कुछ महत्वपूर्ण सिफारिशें की हैं–[16]

- आयोग ने यह सिफारिश की है कि पंचायतों को स्थानीय स्तर पर जनता सरकार का दर्जा दिया जाना चाहिए।
- आयोग ने कहा कि पंचायतों को अपने लिए कर्मचारी नियुक्त करने और उन्हे वेतन–भत्ते देने का अधिकार हो।
- स्थानीय शासन को अधिक नागरिक–केन्द्रित बनाने का सुझाव।
- राज्य शासन में स्थानीय निकायों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने हेतु प्रत्येक राज्यों में विधान परिषद् के गठन का सुझाव।
- स्थानीय निकायों में पारदर्शिता व उनकी जवाबदेही सुनिश्चित करने हेतु लोकपाल की नियुक्ति का सुझाव। स्थानीय संस्थाओं की स्वायत्तता सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकारों पर उनकी निर्भरता समाप्त करने का सुझाव।

इस प्रकार तमाम चुनौतियों एवं समस्याओं को दूर करने के लिए सरकारी प्रयास निरन्तर जारी है। पंचायती राज को सफल बनाने के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों और कर्मचारियों में क्षमता निर्माण विकसित करने हेतु समयबद्ध प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू किया गया है तथा इसके लिए एक अलग पंचायती राज मंत्रालय का गठन वर्ष–2006 में किया गया है।[17] पंचायती राज मंत्रालय एमओपीआर ई–पंचायत मिशन मोड के कार्यान्वयन के जरिए पंचायतों में ई–गर्वेनेंस को बढ़ावा दे रहा है जो निगरानी, कार्यान्वयन, बजट, लेखा परीक्षा, सामाजिक लेखा परीक्षा और प्रमाण पत्र, लाइसेंस आदि जारी करने जैसी नागरिक सेवाएं प्रदान करने आदि जैसे पंचायतों के कामकाज के सभी पहलुओं से संबंधित है। 24 अप्रैल, 2012 को राश्ट्रीय पंचायत दिवस के अवसर पर एरिया प्रोफाइलर, सुवस प्लस, एसेट डायरेक्टरी, एक्शन सॉट, सामाजिक लेखा परीक्षा और प्रशिक्षण प्रबंधन जैसे छह और अनुप्रयोग शुरू किए गए और इन अनुप्रयोगों को अपनाने से कार्यकर्ताओं को इन अनुप्रयोगों के बारे में प्रशिक्षण दिया जा चुका है। इसके अलावा मौलिक आईटी साक्षरता के बारे में प्रशिक्षण भी 14,000 से ज्यादा पीआरआई कार्यकर्ताओं और निर्वाचित प्रतिनिधियों को दिया जा चुका है, ताकि वे ई–गवर्नेंस पहल को अपनाने में सहायक बन सकें।

पंचायती राज मंत्रालय, प्रशासन को पारदर्शी और जवाबदेही बनाने के भारत सरकार के उद्देष्य को पूरा करने के लिए सभी राज्यों/संघषासित प्रदेशों को पीआरआई के खर्चों के विवरण और सालाना योजनाओं को सार्वजनिक करने के लिए प्रेरित कर रहा है।

पंचायतों को अधिकारों, उत्तरदायित्वों और संसाधनों का हस्तांतरण सतत विकेंद्रीकरण और समावेशी विकास के लिए अनिवार्य समझा जाता है। वर्ष 2014–15 के बाद से 20 प्रतिशत धन का संबंध पंचायतों को अधिकार हस्तांतरित करने, समर्थ नीतिगत प्रारूप तैयार करने और पंचायत स्तर पर पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देने सहित विभिन्न मानदंडों पर राज्यों के निष्पादन से होगा।

पंचायती राज मंत्रालय राज्यों और पंचायतों को उनके निष्पादन के लिए प्रोत्साहन देता है। राज्यों को पंचायतों को अधिकार संपन्न बनाने के लिए प्रेरित करने के वास्ते राज्यों का प्रदर्शन एक स्वतंत्र एजेन्सी द्वारा तैयार हस्तांतरण सूचकांक द्वारा आंका जाता है और इस डीआई पर सर्वोच्च दर्जा प्राप्त करने वाले राज्यों को टोकन अवार्ड दिया जाता है। वर्ष 2012–13 के लिए संचयी पंचायत सशक्तीकरण सूचकांक (पीएसआई) पर महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल और पूर्वोत्तर क्षेत्र में त्रिपुरा शीर्ष पर थे और कर्नाटक, राजस्थान, महाराष्ट्र एवं ओड़िसा वृद्धि संबंधी पीएसआई के शीर्ष दर्जे पर था। इन राज्यों को 24 अप्रैल, 2013 को राष्ट्रीय पंचायत दिवस के अवसर पर माननीय प्रधानमंत्री ने सम्मानित किया।

ग्रामीण प्रशासन और सामाजिक–आर्थिक विकास में पंचायतों की प्रमुख भूमिका 1950 के दशक से ही स्वीकृति की जाती है, वर्तमान संदर्भ में समाज कल्याण और समावेशी कार्यक्रमों पर बढ़ते खर्च के साथ सशक्त पंचायतों की जरूरत बढ़ गई है, क्योंकि इन योजनाओं के लाभ लोगों तक पहुंचाना सुनिश्चित करने स्थानीय संस्थाओं के प्रबंधन को बेहतर बनाने तथा जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए पंचायते महत्वपूर्ण है।[18]

फिर भी हमें याद रखना होगा कि लोकतंत्र शासन के आधार पर नहीं वरन् शासन की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। लोकतंत्र का सारतत्व क्षेत्र न होकर व्यक्ति में निहित होता है। आज लोकतंत्रवादी हो या विकासवादी या नारीवादी सबके लिए प्रसंग एक ही है कि एक न्यायपूर्ण एवं 'समतामूलक समाज' की स्थापना की जाए तथा लोकतंत्र की आत्मा को सुदृढ़ कर इसे सर्वसाधारण के लिए प्रासंगिक कैसे बनाया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि स्वयं पंचायतों का सशक्तीकरण हो। इसलिए हमें पंचायती राज को विकास के वाहक के रूप

में देखने की बजाय विकास को ही पंचायती राज के वाहक के रूप में देखना चाहिए।

संदर्भ

1. *रशीद्उद्दीन खान, भारत में लोकतंत्र,एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली पृष्ठ 118।*
2. *डेविड बीथम, केविन बॉयले, लोकतंत्र, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1996, पृष्ट–68।*
3. *वल्लभशरण, नई पंचायती राज व्यवस्था। – संवैधानिक संशोधन और राज्य, इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, नई दिल्ली, 1966. पृष्ठ–13,14।*
4. *हृग टिंकर, दी फाउन्डेसन्सा ऑफ लोकल गर्वनमेन्ट इन इंडिया पाकिस्तान एण्ड वर्मा, लालवानी पब्लिशिंग हाउस मुम्बई–1967. पृष्ठ –19।*
5. *रजनी कोठारी, राजनीति की किताब, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003.पृष्ठ–106।*
6. *महीपाल, पंचायती राज चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 1996. पृष्ठ–12।*
7. *वही पृष्ठ–13,14।*
8. *महीपाल, पंचायती राज : अतीत, वर्तमान और भविष्य, सारांश प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996 पृष्ठ–22, 23।*
9. *जॉर्ज मैथ्यू, पंचायती राज : समस्याएँ एवं परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2002. पृष्ठ–32, 33।*
10. *रजनी कोठारी, राजनीति की किताब, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003.पृष्ठ–107।*
11. *'संपादकीय' जनसत्ता, अप्रैल 24, 2008, नई दिल्ली।*
12. *'संपादकीय' जनसत्ता, अप्रैल 26, 2008, नई दिल्ली।*
13. *भारत संदर्भ ग्रन्थ 2009 – सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय।*
14. *'संपादकीय' जनसत्ता, सितम्बर 29, 2009, नई दिल्ली।*
15. *'रविवारी' जनसत्ता अप्रैल 27, 2008, नई दिल्ली।*
16. *द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग की छठी रिपोर्ट।*
17. *जॉर्ज मैथ्यू, 'पंचायती राज को चाहिए एक नया जीवन', जनसत्ता, अप्रैल–22, 2008, नई दिल्ली।*
18. भारत संदर्भ ग्रन्थ, 2015, पृष्ठ– 701–707।

Copyright © 2016 *Dr Jitendra Kumar Pandey*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.